शिव कुमार गोएल *बनाम* **हरियाणा राज्य और अन्य**

माननीय न्यायमीर्ति एम.एम. कुमार और एस.एन. अग्रवाल के समक्ष.

शिव कुमार गोएल — *याचिकाकर्ता*

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य, — *उत्तरदाताओं*

सी.डब्लू.पी 2003 का 1338

17 नवंबर, 2006

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - पंजाब सिविल सेवा *नियम, खंड II-नियम 2.2 (बी) फ़ौजदारी न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता को अवैध रिश्वत लेने के आरोपों से बरी करना क्योंकि अभियोजन पक्ष इसे साबित करने में विफल रहा - बहाली के लिए दावा - याचिकाकर्ता की छंटनी का आदेश - छंटनी के बाद याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया - जवाब पर विचार करने और सुनवाई का अवसर देने के बाद निलंबन की अवधि को सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए गैर-ड्यूटी अवधि के रूप में मानने का आदेश दिया गया- नियम 2.2 में प्रावधान है कि विभागीय कार्यवाही सेवानिवृत्ति के बाद शुरू की जा सकती है लेकिन यह उस घटना के संबंध में नहीं होनी चाहिए जो अनुशासनात्मक कार्यवाही की स्थापना की तारीख के चार साल से अधिक समय पहले हुई हो - 2002 में याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई की स्थापना की तारीख से चार साल से अधिक समय पहले हुई - 1996 से 2002 तक की अवधि नियम 2.2 में निर्धारित चार साल की अवधि से बहुत अधिक है- एक बार जब बड़ा जुर्माना लगाने के लिए विभागीय कार्यवाही शुरू हो जाती है, तो चेतावनी आदि जैसे मामूली जुर्माना लगाने के लिए भी नियमित विभागीय कार्यवाही शुरू करने की आवश्यकता होती है - याचिकाकर्ता के निलंबन की अवधि के उपचार के विषय पर कोई नोटिस जारी नहीं किया गया - याचिका*

को स्वीकार किया जाता है, याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों के साथ पूरी निलंबन अवधि के लिए वेतन का भुगतान करने का हकदार माना जाता है।

निर्णय, यह सच है कि पैरा 12 में विशेष न्यायाधीश ने कहा है कि संदेह का लाभ याचिकाकर्ता को दिया गया था, लेकिन पैरा 9 में चर्चा से कोई संदेह नहीं रह जाता है कि याचिकाकर्ता को योग्यता के आधार पर बरी कर दिया गया था क्योंकि उस पर न तो कार्यकारी अभियंता की ओर से पैसे मांगने का बयान लगाया गया था और न ही शिकायत में इस तरह के किसी आरोप का उल्लेख किया गया था। यहां तक कि किसी भी गवाह ने ऐसा नहीं कहा था। पूरे अपराध का सरगना कार्यकारी अभियंता प्रतीत होता है, जिसे पुलिस ने मुकदमे के लिए भी नहीं भेजा था।

इसलिए, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ता को केवल संदेह का लाभ दिया गया है। वास्तव में, अभियोजन पक्ष विशेष रूप से आरोपों को साबित करके भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 की आवश्यकताओं को पूरा करने में विफल रहा था। मूल कानून की आवश्यकता को पूरा नहीं किया गया है और ऐसी स्थिति में यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि याचिकाकर्ता को संदेह का लाभ देकर बरी कर दिया गया है।

(पैरा 5)

इसके अलावा, नियम 2.2 (बी) के प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाएगा कि दंड देने वाला प्राधिकरण को सेवानिवृत्ति और छंटनी के बाद भी याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी रखनी चाहिए थी। यदि इस तरह की कार्यवाही उनकी छंटनी की तारीख से पहले शुरू की गई होती, तो नियम 2.2 में अपनाया गया रेखांकित सिद्धांत लागू नहीं होता, कि एक कर्मचारी जो सेवानिवृत्त हो गया है या छंटनी कर दिया गया है, वह लागू नहीं होता। इसके अलावा यह शर्त भी है कि ऐसे कर्मचारी को गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाना चाहिए था या कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक

नुकसान पहुंचाना चाहिए था। नियम में यह भी प्रावधान है कि सेवानिवृत्ति के बाद सरकार की मंजूरी से विभागीय कार्यवाही भी शुरू की जा सकती है, लेकिन यह उस घटना के संबंध में होनी चाहिए ,जो ऐसी कार्यवाही की स्थापना की तारीख से चार साल से अधिक समय पहले नहीं हुई हो।

(पैरा 7)

याचिकाकर्ता की ओर से – एडवोकेट, के.एस.ढिल्लों।

प्रतिवादी नंबर 1 के लिए- हरीश राठी, सीनियर डी.ए.जी हरियाणा।

प्रतिवादी नंबर 2 के लिए- एडवोकेट, आर. एन लोहान।

<u>निर्णय</u>

माननीय न्यायमूर्ति एम.एम. कुमार

1. हरियाणा राज्य लघु सिंचाई एवं नलकूप निगम, चंडीगढ़ के प्रबंध निदेशक (इसके बाद "निगम" के रूप में संदर्भित) प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित दिनांक 20 नवंबर, 2002 का आदेश (अनुलग्नक पीआई) संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर इस याचिका में चुनौती का विषय है। याचिकाकर्ता को 12 जुलाई, 1996 से 30 जून, 2002 तक की निलंबन अवधि के संबंध में वेतन और परिलब्धियों से वंचित कर दिया गया था। आगे यहआदेश दिया गया था कि उपरोक्त अवधि को सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए एक गैर-कर्तव्य अवधि के रूप में माना जाना चाहिए। चेतावनी की सजा उसे पहले ही दी जा चुकी थी। यह निर्विवाद है कि सहायक कैशियर के पद पर काम करने वाले याचिकाकर्ता को 12 जुलाई, 1996 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत 12 जुलाई, 1996 को पुलिस स्टेशन गोहाना में दर्ज एफ.आई.आर नंबर 242 में धारा 7,11,13 के पंजीकरण पर निलंबित कर दिया गया था। आपराधिक मुकदमे के लंबित रहने के

दौरान, याचिकाकर्ता की सेवाओं को 30 जून, 2002 को हटा दिया गया था। 24 जनवरी, 2002 को याचिकाकर्ता को सोनीपत के विशेष न्यायाधीश ने बरी कर दिया क्योंकि उसके खिलाफ आरोप साबित नहीं हो सका। उन्होंने 17 फरवरी, 2002 को एक आवेदन देकर सेवा में अपनी बहाली के लिए प्रतिवादी संख्या 2 से संपर्क किया (अनुबंध पी 5)। तथापि, 24 अक्तूबर, 2002 को उनके विरुद्ध आरोप-पत्र प्रस्तुत किया गया (अनुपत्र पी 7)। याचिकाकर्ता ने 28 अक्तूबर, 2002 को आरोप-पत्र का विस्तृत उत्तर भेजा (अनुलग्नक पृष्ठ 8)। उन्हें 20 नवम्बर, 2002 को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर दिया गया। व्यक्तिगत सुनवाई के बाद, निगम के प्रबंध निदेशक ने आक्षेपित आदेश पारित किया और उसी का ऑपरेटिव हिस्सा निम्नानुसार है::—

"सभी भौतिक रिकॉर्ड, सोनीपत के विशेष न्यायाधीश के निर्णय, आरोप-पत्र के फैसले और आरोप-पत्र के जवाब पर विचार करने के बाद, मैं 12 जुलाई, . 1996 से 30 जून, 2002 की दोपहर तक निलंबन की अवधि को गैर-ड्यूटी अवधि के रूप में मानने का आदेश देता हूं, यह देखा गया है कि श्री शिव कुमार गोयल के खिलाफ 12 जुलाई, 1996 की एफ.आई.आर संख्या 242 में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7, 11, 13 के तहत आरोप-पत्र दायर किया गया था क्योकि वह उस मामले में श्री पी फूल सिंह शिकायतकर्ता से अवैध रिश्वत लेने में शामिल थे। मामले के उचित निर्णय के बाद, विशेष न्यायाधीश, सोनीपत ने पाया कि अभियोजन पक्ष का बयान अपने ही गवाहों द्वारा विरोधाभासी है और इस प्रकार अभियोजक का मामला अत्यधिक संदिग्ध हो जाता है, इसलिए विशेष न्यायाधीश ने श्री शिव कुमार गोयल को संदेह का लाभ दिया। विशेष न्यायाधीश, सोनीपत के निष्कर्षों और अधिकारी के आचरण को ध्यान में रखते हुए, मैं पूरी तरह से आश्वस्त हूं कि श्री शिव कुमार अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए उनके द्वारा किए गए कार्यों और कर्मों के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार हैं। चूंकि, निगम द्वारा पहले ही 'निगम के बंद होने' पर उनकी छंटनी की जा चुकी है . । मैं 12

जुलाई, 1996 से 30 जून, 2002 तक के निलंबन की अवधि को सभी आशयों और प्रयोजनों की गैर-ड्यूटी अवधि के रूप में चेतावनी के साथ मानने का आदेश देता हूं। यह भी आदेश दिया जाता है कि वह नियमों के तहत स्वीकार्य निर्वाह भत्ते को छोड़कर किसी भी अतिरिक्त वेतन, परिलब्धियों का हकदार नहीं होगा।

(2) के.एस ढिल्लों ने तर्क दिया है कि एक बार जब निगम ने याचिकाकर्ता को बड़ी सजा देने के लिए आरोप-पत्र को छोड़ने का फैसला किया है, तो इस निष्कर्ष को दर्ज करने के लिए कुछ भी नहीं बचा है कि याचिकाकर्ता किसी भी तरह से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए कृत्यों और कुकर्मों के लिए जिम्मेदार था। विद्वान वकील के अनुसार, निगम द्वारा 30 जून, 2002 को याचिकाकर्ता की छंटनी पर नियोक्ता और कर्मचारी के संबंध समाप्त हो गए हैं और किसी भी मामले में उसे कोई सजा नहीं दी जा सकती थी जब तक कि उसकी छंटनी से पहले आरोप पत्र जारी नहीं किया गया हो या यह उसकी छंटनी की तारीख से चार साल पहले हुई घटना के संबंध में हो। उन्होंने आगे तर्क दिया है कि अवैध रिश्वत लेने के आरोपों के आधार पर एफआईआर 12 जुलाई, 1996 को दर्ज की गई थी और 24 अक्टूबर, 2002 को आरोप पत्र जारी किया गया था, जो पंजाब सिविल सेवा नियम, खंड-II (हरियाणा पर लागू) के नियम 2.2 (बी) में निर्धारित चार साल की अवधि से बहुत अधिक है। वकील ने दलील दी है कि आदेश बिना किसी औचित्य के है और याचिकाकर्ता पर बड़ा या मामूली जुर्माना लगाने के लिए कोई जांच कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती थी और न ही कोई कारण बताओ नोटिस जारी किया जा सकता था। उन्होंने पंजाब सिविल सेवा नियम, खंड-II (हरियाणा पर लागू) के नियम 2.2 (बी) पर भरोसा किया है।

(3) प्रतिवादियों के वकील श्री आर. एन. लोहान ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता के पास 20 नवंबर, 2002 के आदेश के खिलाफ निगम के अध्यक्ष के समक्ष अपील दायर करने के लिए वैकल्पिक प्रभावी उपाय उपलब्ध है (अनुबंध पी.1)। गुण-दोष के आधार पर, उन्होंने तर्क दिया है कि बरी होने के

बावजूद उन्हें निश्चित रूप से वेतन के साथ सभी परिणामी लाभ प्रदान करके बहाली का हकदार नहीं ठहराया जा सकता है। इस संबंध में, उन्होंने "**कृष्णकांत रघुनाथ बिभवनेकप** बनाम **महाराष्ट् राज्य**[1]के मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर निर्भर किया है और तर्क दिया कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण कदाचार की जांच कर सकता था या नोटिस जारी करने के बाद, निलंबन अवधि को ड्यूटी पर खर्च नहीं की गई अवधि के रूप में मानते हुए एक उचित आदेश पारित कर सकता था।

(4) हमने पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा की गई संबंधित प्रस्तुतियों पर सोच-समझकर विचार किया है और हमारा विचार है कि यह याचिका अनुमति के योग्य है क्योंकि याचिकाकर्ता को आपराधिक न्यायालय द्वारा बरी कर दिया गया था। विशेष न्यायाधीश ने दिनांक 24 जनवरी, 2002 के अपने निर्णय के पैरा 9 में पाया है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि याचिकाकर्ता ने कभी कार्यकारी अभियंता श्री जे.सी मित्तल की ओर से धन की मांग की थी। उपरोक्त आरोप न तो शिकायत में उनके खिलाफ लगाए गए हैं, जिसे पूर्व पी.बी के रूप में रिकॉर्ड पर प्रदर्शित किया गया था और न ही किसी गवाह द्वारा ऐसा कोई तथ्य कहा गया था। इसके विपरीत शिकायत में कहा गया है कि अधिशासी अभियंता श्री जे.सी मित्तल ने आरोपी एस.पी भाटिया को सौंपने के लिए पैसे की मांग की थी। फैसले के पैरा 9 को निकालना सार्थक है, जो

"यह तर्क किसी भी बल से रहित है। अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, जो कोई भी लोक सेवक होने के नाते अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए अनुचित लाभ के रूप में कोई रिश्वत स्वीकार करता है, तो वह सजा के लिए उत्तरदायी

[1] ए.आई.आर 1997 एस.सी. 1434

होता है। लेकिन मौजूदा मामले में अभियोजन पक्ष यह साबित करने में बुरी तरह से विफल रहा है कि आरोपी शिव कुमार गोयल ने काडा, के एक्सईएन, जे. सी मित्तल की ओर से चेक तैयार कर कभी पैसे की मांग की थी। न तो इसका उल्लेख शिकायत एक्स.पी.बी में किया गया है और न ही इस तथ्य को किसी भी गवाह द्वारा कहा गया है। शिकायत के अनुसार, एक्स ई एन जे.सी मित्तल ने आरोपी एस.पी भाटिया को सौंपने के लिए पैसे की मांग की। किसी भी आरोपी ने शिकायतकर्ता से बिल तैयार करने के लिए कभी पैसे नहीं मांगे। यहां यह उल्लेखनीय है कि एक्स ई एन जे.सी मित्तल द्वारा की गई मांग के आधार पर पुलिस तंत्र हरकत में आया था। लेकिन, उसे पुलिस द्वारा ट्रायल के लिए नहीं भेजा जाता है। इस धारा के तहत दंडनीय अपराध के लिए किसी भी व्यक्ति को दोषी ठहराने के लिए अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक है कि वह इस मांग को साबित करे और धन सौंपे। पैसे मांगने और स्वीकार करने के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए सबूत ठोस नहीं हैं। आरोपी शिव कुमार अग्रवाल का नाम शिकायत में कहीं नहीं था, और ना ही पी.डब्लू. २ के बयान में। जब अभियोजन पक्ष इसके बदले पैसे की मांग और स्वीकृति को साबित करने में विफल रहा है, तो इस मामले का विफल होना तय है। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि बिल को अंतिम रूप से एक्स ई एन द्वारा पारित किया जाना था और उन्हें चेक जारी करना था। इस मामले को तय करने का अंतिम अधिकार एक्स ई एन के पास था। किसी भी आरोपी को बिल का भुगतान नहीं करना था और चेक जारी नहीं करना था। एक्स ई एन के आदेश के बाद ही शिव कुमार अग्रवाल को चेक जारी करना था। बिल तैयार करने या उसे जारी करने में उनकी कोई भूमिका नहीं थी। आरोपी एसपी भाटिया को एक्सईएन को उनके जरूरी आदेशों के लिए बिल भेजना था। किसी बिल को अंतिम रूप से पारित या अस्वीकार करना एक्स ई एन का कर्तव्य था। इसलिए, उनके लिए शिकायतकर्ता से पैसे मांगने का कोई अवसर नहीं था, हालांकि यह न तो अभियोजन पक्ष का मामला है और न ही

पीडब्ल्यू द्वारा कहा गया है। मेरे ये विचार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम राम आसरे 1990 के आपराधिक न्यायालय के निर्णयों 82**, **होशियार सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य 1995 (2) आपराधिक न्यायालय के निर्णय 638, शादी लाल** बनाम **हरियाणा राज्य आर.सी.आर. (आपराधिक 660) और सतबीर सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य 2000 (1)** में व्यक्त की गई माननीय उच्चतम न्यायालय की राय से पुष्ट होते हैं, जिसमें यह विशेष रूप से राय दी गई है कि यदि आरोपी को शिकायतकर्ता को कोई लाभ देने के लिए कार्य नहीं करना था और उसकी ओर से कोई मांग नहीं थी तो आरोपी को सिर्फ कथित धन की वसूली के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। .

(5) यह सच है कि पैरा 12 में, विद्वान विशेष न्यायाधीश ने कहा है कि याचिकाकर्ता को संदेह का लाभ दिया जा रहा था, लेकिन पैरा 9 में चर्चा से कोई संदेह नहीं है कि याचिकाकर्ता को योग्यता के आधार पर बरी कर दिया गया है क्योंकि उसे न तो कार्यकारी अभियंता श्री जे.सी मित्तल की ओर से पैसे मांगने का बयान दिया गया था और न ही शिकायत में इस तरह के किसी आरोप का उल्लेख किया गया था। यहां तक कि किसी भी गवाह ने ऐसा नहीं कहा है। पूरे अपराध का सरगना अधिशासी अभियंता श्री जे.सी मित्तल प्रतीत होता है, जिन्हें पुलिस ने मुकदमे के लिए भी नहीं भेजा था। इसलिए, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ता को केवल संदेह का लाभ दिया गया है। वास्तव में अभियोजन धारा 7 की आवश्यकताओं को पूरा करने में विफल रहा था और विशेष रूप से आरोप को साबित नहीं किया गया। मूल कानून की आवश्यकता को पूरा नहीं किया गया है और ऐसी स्थिति में यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि याचिकाकर्ता को संदेह का लाभ देकर बरी कर दिया गया है।

(6) अन्यथा भी, पंजाब सिविल सेवा नियमावली खंड-II (हरियाणा पर यथा लागू) के प्रावधान इस मुद्दे को कवर नहीं करते। उपर्युक्त नियमों के नियम 2.2 (बी) में निर्धारित सिद्धांत, जो एक पेंशनभोगी पर लागू होते हैं, याचिकाकर्ता जैसे छंटनी

किए गए कर्मचारी के मामले में आयात किए जा सकते हैं। उपर्युक्त नियम में एक सर्वव्यापी प्रावधान है और यह निम्नानुसार है। —

2.2 (ए) भविष्य का अच्छा आचरण पेंशन देने की एक अंतर्निहित शर्त है। यदि पेंशनभोगी को गंभीर अपराध का दोषी ठहराया जाता है या गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाता है तो नियुक्ति प्राधिकारी पेंशन या उसके किसी भी हिस्से को रोकने या वापस लेने का अधिकार सुरक्षित रखता है।

इस नियम के तहत पेंशन के पूरे या किसी भी हिस्से को रोकने या वापस लेने के किसी भी प्रश्न पर नियुक्ति प्राधिकारी का निर्णय अंतिम और निर्णायक होगा।

नोट 1. ....

नोट 2. ....

नोट 3. ....

Xx xx xx xx xx **x x**

(ख) यदि पेंशनभोगी विभागीय या न्यायिक कार्यवाहियों में, सेवानिवृत्ति के बाद पुनर्नियोजन पर प्रदान की गई सेवा सहित, अपनी सेवा के दौरान कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक नुकसान पहुंचाने के गंभीर कदाचार में दोषी पाया गया तो सरकार पेंशन या उसके किसी भाग को, चाहे स्थायी रूप से या विनिदष्ट अवधि के लिए हो, रोकने या निकालने का अधिकार अपने पास सुरक्षित रखती है और यदि पेंशनभोगी विभागीय या न्यायिक कार्यवाहियों में पाया जाता है, तो पेंशन से पूरी या सरकार को हुई किसी भी आथक हानि की वसूली का आदेश देने का अधिकार सरकार के पास सुरक्षित है।

बशर्ते कि—

(i) इस तरह की विभागीय कार्यवाही, यदि अधिकारी सेवा में रहते हुए स्थापित की गई है, चाहे वह उसकी सेवानिवृत्ति से पहले हो या सेवा के दौरान अधिकारी की अंतिम सेवानिवृत्ति के बाद पुनर्नियोजन, इस नियम के तहत एक कार्यवाही मानी जाएगी और उस प्राधिकारी द्वारा जारी रखा और समाप्त की जाएगी जैसे कि अधिकारी सेवा में जारी हो ।

(ii) ऐसी विभागीय कार्यवाही, यदि अधिकारी के सेवानिवृत्ति से पहले या पुनर्नियुक्ति के दौरान ड्यूटी पर रहते हुए स्थापित नहीं की गई है तो:—

(i) सरकार की मंजूरी के बिना संस्थान स्थापित नहीं किया जाएगा;

(ii) यह किसी ऐसी घटना के संबंध में होगा जो ऐसी कार्यवाहियों की स्थापना से चार वर्ष से अधिक पूर्व नहीं हुई हो; और

(iii) ऐसा प्राधिकारी द्वारा और ऐसे स्थान या स्थानों पर किया जाएगा जो सरकार निदेश दे और विभागीय कार्यवाहियों पर लागू प्रक्रिया के अनुसार जिसमें सेवा से बर्खास्तगी का आदेश दिया जा सकता है;

(3) ऐसी न्यायिक कार्यवाही, यदि अधिकारी अपनी सेवानिवृत्ति से पहले या अपने रोजगार के दौरान ड्यूटी पर रहते हुए स्थापित नहीं की गई थी, तो खंड (ii) परंतुक ('2) में उल्लिखित घटना के संबंध में स्थापित की जाएगी; और

(4) अंतिम आदेश पारित करने से पहले लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाएगा।

स्पष्टीकरण- इस नियम के उद्देश्य के लिए—

1. विभागीय कार्यवाही तब शुरू मानी जाएगी जब पेंशनभोगी के खिलाफ तय किए गए आरोप उसे जारी किए जाते हैं या, यदि अधिकारी को ऐसी तारीख को पहले की तारीख से निलंबित कर दिया गया है; और

2. न्यायिक कार्यवाही शुरू मानी जाएगी

(i)आपराधिक कार्यवाही के मामले में, जिस तारीख को शिकायत की जाती है या आपराधिक अदालत में चालान प्रस्तुत किया जाता है; और

(ii) सिविल कार्यवाही के मामले में, जिस तारीख को वाद प्रस्तुत किया जाता है या, जैसा भी मामला हो, सिविल न्यायालय में एक आवेदन किया जाता है।.

(7) उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दंडदेने वाला प्राधिकरण सेवानिवृत्ति और छंटनी के बाद भी याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही जारी रखी जा सकता था। यदि इस तरह की कार्यवाही उसकी छंटनी की तारीख से पहले शुरू की गई होती, तो नियम 2.2 (बी) में अपनाया गया रेखांकित सिद्धांत, कि एक कर्मचारीजो जो सेवानिवृत्त हो गया, उसकी छंटनी कर दी जाये, यह लागू नहीं होगा। इसके अलावा यह शर्त भी है कि ऐसे कर्मचारी को गंभीर कदाचार का दोषी पाया जाना चाहिए था या कदाचार या लापरवाही से सरकार को आर्थिक नुकसान पहुंचाना चाहिए था। नियम में यह भी प्रावधान है कि सेवानिवृत्ति के बाद सरकार की मंजूरी से विभागीय कार्यवाही भी शुरू की जा सकती है, लेकिन यह ऐसी कार्यवाही की स्थापना की तारीख से चार साल से अधिक समय पहले हुई घटना के संबंध में होनी चाहिए।

(8) उपरोक्त नियम में निर्धारित सिद्धांत के आलोक में वर्तमान मामले के तथ्यों की जांच की जाये, तो यह पता चलता है कि याचिकाकर्ता को पी.एस गोहाना में दर्ज भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत 12 जुलाई, 1996 को एफ.आई.आर नंबर 242 के मुकदमे का सामना करना पड़ा था। उन्हें सबूतों के अभाव में गुण-दोष के आधार पर बरी कर दिया गया क्योंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 के मूल गुण असंतुष्ट थे और अभियोजन पक्ष द्वारा याचिकाकर्ता को अपराध से जोड़ने वाला कोई सबूत पेश नहीं किया जा सका। तदनुसार, 24 जनवरी, 2002 को विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा उनके पक्ष में बरी किए जाने का निर्णय दर्ज किया गया था (अनुपत्र पी 3)। इस बीच बरी करने के फैसले के बाद याचिकाकर्ता की सेवाओं को 30 जून, 2002 को हटा दी गई थी।

दिनांक 24 अक्तूबर, 2002 (अनुलग्नक पी 7) के आरोप-पत्र जारी किए जाने और याचिकाकर्ता के दिनांक 28 अक्तूबर, 2002 के उत्तर (अनुलग्नक पी 8) के बावजूद, निगम के प्रबंध निदेशक ने निलंबन की अवधि को गैर-ड्यूटी अवधि मानते हुए याचिकाकर्ता के विरुद्ध निर्वाह भत्ते के भुगतान के अलावा कोई लाभ दिए बिना आदेश पारित किया गया। याचिकाकर्ता को चेतावनी भी दी गई थी। उपरोक्त नियमों के नियम 2.2 में निर्धारित सिद्धांत के अनुसार, प्राधिकरण याचिकाकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता था। किसी भी मामले में, याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र जारी करके उसके खिलाफ कार्रवाई करने के लिए दंडित प्राधिकारी द्वारा किए गए प्रयास को वस्तुत छोड़ दिया गया था, फिर भी 20 नवंबर, 2002 को सजा का आदेश पारित किया गया था। यह अच्छी तरह से तय है कि एक बार दोषी कर्मचारी के खिलाफ बड़े दंड लगाने के लिए विभागीय कार्यवाही शुरू की गई हो, तो चेतावनी आदि जैसे मामूली जुर्माना लगाने के लिए भी नियमित विभागीय कार्यवाही शुरू करने की आवश्यकता होती है। इस संबंध में, "**केजी तिवारी** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य** [2]" के मामले में इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के फैसले पर निर्भर किया जा सकता है।

(9) एक अन्य कारण जिसने हमें यह विचार करने के लिए राजी किया कि आपराधिक न्यायालय द्वारा मेरिट के आधार पर याचिकाकर्ता को बरी किए जाने के बाद कोई जांच नहीं की जा सकती है, याचिकाकर्ता को जारी 24 अक्टूबर, 2002 का आरोप-पत्र (अनुलग्नक पी 7) उन्हीं तथ्यों और आरोपों पर आधारित है जो आपराधिक आरोप का आधार थे। यहां तक कि विभागीय कार्यवाही में जो साक्ष्य पेश किए जाने की संभावना थी, वे भी समान थी। इन परिस्थितियों में सुप्रीम कोर्ट ने "**जीएम टैंक** बनाम **गुजरात राज्य**[3]" (3) के मामले में कहा है कि आपराधिक मुकदमे में याचिकाकर्ता के बरी होने के बाद

[2] 2002 (4) एस.एल.आर 329

[3] (2006) 5 एस.सी.सी. 446

किसी भी जांच की अनुमति नहीं होगी। इसलिए, प्रबंध निदेशक द्वारा पारित दिनांक 20 नवम्बर, 2002 (अनुलग्नक पीआई) के आदेश को कानून की नजर में कायम नहीं रखा जा सकता।

(10) इस मामले का एक दूसरा पहलू भी है। पंजाब सिविल सेवा नियमावली खंड-I (हरियाणा पर यथा लागू) अध्याय VIL को शामिल किया गया है जो अन्य बातों के साथ-साथ निलंबन के विषय से संबंधित है। नियम 7.3 में इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक व्यापक प्रक्रिया निर्धारित की गई है कि निलंबन की अवधि को किस प्रकार से लिया जाना है। उपर्युक्त नियम "**बीडी गुप्ता** बनाम **हरियाणा राज्य** [4]" के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विचार का विषय था। यह माना गया था कि यदि कोई आदेश वित्तीय रूप से प्रतिकूल प्रभाव डालता है तो सभी प्रासंगिक तथ्यों और परिस्थितियों के वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन के बाद मामूली जुर्माना भी पारित किया जाना चाहिए। पीड़ित कर्मचारी नोटिस जारी करके सुनवाई का पूरा अवसर दिया जाना अपेक्षित है। वर्तमान मामले में, निलंबन की अवधि के उपचार के विषय पर याचिकाकर्ता को कोई का नोटिस जारी नहीं दिया गया। इस आधार पर भी, दिनांक 20 नवम्बर, 2002 का आदेश (अनुलग्नक पी 1) निरस्त किया जा सकता है।

(11) **कृष्णकांत रघुनाथ बिभावनेकर के मामले (सुप्रा)** में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के आधार पर प्रतिवादी के विद्वान वकील की दलील हमें प्रभावित करने में विफल रही है क्योंकि जांच की पर्याप्त गुंजाइश थी, क्योंकि कर्मचारी को न तो सेवा से सेवानिवृत्त किया गया था और न ही उसकी छंटनी की गई थी। वर्तमान मामले में, नियोक्ता-कर्मचारी संबंध 30 जून, 2002 को समाप्त हो गया है , जब उसे सेवा से हटा दिया गया था और इसलिए, उपर्युक्त निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। तदनुसार, तर्क योग्यता से रहित है और इसे अस्वीकार कर दिया जाता है।

[4] (1973) 3 एस.सी.सी.

शिव कुमार गोएल *बनाम* **हरियाणा राज्य और अन्य**

(12). उपर्युक्त कारणों से, यह याचिका सफल होती है और दिनांक 20 नवंबर, 2002 (अनुलग्नक पीआई) के आदेश को रद्द किया जाता है। याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों का हकदार माना जाता है। दूसरे शब्दों में, उसे 12 जुलाई, 1996 से 30 जून, 2002 तक निलंबन की पूरी अवधि के लिए वेतन का भुगतान किया जाएगा और इसे सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए ड्यूटी पर बिताए गए समय के रूप में माना जाएगा।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वियन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

अनमोल कक्कड़
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer) करनाल, हरियाणा

शिव कुमार गोएल *बनाम* **हरियाणा राज्य और अन्य**